स्नातकोत्तर हिन्दी द्वितीय सत्रार्द्ध

पत्र संख्या - 06

बिहारी के दोहों की व्याख्या

दोहा संख्या - 20, 25, 32, 34

दोहा :- 20 अजौं तरयौना ही रह्यौ श्रुति सेवत इक रंग ।
नाक-बास बेसरि लह्यौ बसि मुकुतनु कैं संग ॥

व्याख्या :- प्रस्तुत दोहे में बिहारी सत्संगति के महत्व का संकेत किया है, लेकिन इसके लिए उन्होंने रीतिवादी उपकरणों का सहारा लिया है। इसके लिए श्लेष की योजना की गई है। इस दोहे में संबोधनात्मक शैली में कहा गया है कि कानों में धारण किया जाने वाला तरयौना समान भाव से कानों का सेवन करने के बावजूद आज तक तरा नहीं। वह अंत-अंत तक निम्न स्थान का अधिकारी ही बना रहा। इसके विपरीत नाक में धारण किया जाने वाला गहना बेसरि मुक्त पुरुष के साहचर्य के कारण उच्चपद को प्राप्त करने में सफल रहा। यहाँ पर नाक श्रेष्ठता के प्रतीक के रूप में सामने आया है और उसी नाक से संबद्ध होकर बेसरि उच्च स्थान प्राप्त करने में सफल रहता है। एक रूप से श्रुति का सेवन करता हुआ मनुष्य आज तक तरा नहीं, लेकिन अधम से अधम प्राणी को भी सज्जनों के संसर्ग में मुक्ति पाने का अवसर मिला और वे स्वर्गस्थ हो गए।

सत्संगति की ऐसी महिमा को प्रतिपादित करने के लिए तुलसी ने बिना किसी आवरण के सरल एवं सहज शब्दों का सहारा लिया है-

बिनु सत्संग विवेक न होई।
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई ॥

लेकिन, जहाँ बिहारी की व्यंजना उनकी रीतिवादी मानसिकता के कारण दबी-रह जाती है, वहीं भक्त कवि तुलसी लोकचेतना से अपनी संपृक्ति के कारण उसे स्पष्ट शब्दों में प्रतिपादित करते हैं।

दोहा:- 25 तौ पर वारौं उरबसी, सुनि, राधिके सुजान।
तू मोहन कैं उर बसी ह्वै उरबसी-समान ॥

व्याख्या:- कृष्ण भक्त कवियों के राधा और कृष्ण रीतिकाल तक आते-आते जीवात्मा और परमात्मा के प्रतीक नहीं रह जाते, बल्कि लौकिक जीवन के नायक नायिका में तब्दील हो जाते हैं। जो इस दोहे के जरिए बिहारी ने कृष्ण के मुख से राधा के अप्रतिम सौन्दर्य का वर्णन किया है। यह न केवल राधा के प्रति कृष्ण के अनुराग को रेखांकित करता है वरन् परकीया बहुनिष्ठ प्रेम वाले समाज में एकनिष्ठ प्रेम का आश्वासन बनकर भी आता है। यहाँ पर कृति राधा को संबोधित करती हुए कहती है कि तुम्हारे रूप पर इन्द्र की अप्सरा उर्वशी को भी न्यौछावर कर दूँ। आशय यह कि तुम्हारे रूप-सौन्दर्य के आगे उर्वशी का रूप-सौन्दर्य फीका है। कारण यह कि उस मोहन के हृदय में तू इस तरह बसी है जिस प्रकार वक्षस्थल पर धारण की जानेवाली माला बसती है।

कृष्ण। का अन्य स्त्री में अनुरक्त होने का प्रश्न तो उठता ही नहीं, इसीलिए तू निश्चिंत रह। तू ही उनके लिए उर्वशी के समान है, कोई और नहीं। यहाँ पर संस्कृत के उर्वशी शब्द का 'उरवसी' के रूप में ब्रज-भाषाईकरण हुआ है। 'उरवसी' में यमक अलंकार है। एक ओर यह इन्द्र की अप्सरा का संकेतक है, तो दूसरी ओर हृदय में धारण की जानेवाली माला का।

यमक की योजना के कारण इस दोहे का काव्य-सौन्दर्य और अधिक निखर आया है, लेकिन बिहारी की रीतिवादी मानसिकता भक्ति के धरातल पर या प्रेम के सहज और स्वाभाविक चित्रों को देर तक टिकने नहीं देती। उन्हें खींचकर एक बार फिर से श्रृंगार के दैहिक धरातल पर खड़ा कर देती है।

दोहा:-32. कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात।
भरे भौन में करत हैं, नैननु ही सौं बात॥

व्याख्या:- इस दोहे में सामंती मानसिकता वाले प्रेम को अभिव्यक्ति मिली है। नायक और नायिका अपने परिजनों से घिरे हुए हैं। इसी स्थिति में नायक के मन में रति की इच्छा जन्म लेती है, लेकिन परिस्थितियाँ उसे शब्दों के माध्यम से प्रकट करने की इजाजत नहीं देती। इसलिए नायक आँखों के दामन का सहारा लेता है जिसकी प्रेम व्यापार में महत्वपूर्ण भूमिका होती है और जो रूप के संदेश को मन तक पहुँचाने का काम करता है। नायक रति की अपनी इच्छा नायिका के सामने प्रकट करता है। नायिका नायक के इस प्रस्ताव को ठुकरा देती है और इसके पीछे परिस्थितिजन्य विवशता मौजूद है, लेकिन कहीं-न-कहीं नायिका के मनोभाव नायक से अप्रकट नहीं रह पाते।

इसलिए 'मन में भावै मूरी हिलावै' वाली नायिका की मना करने वाली इस अदा पर नायक रिझ जाता है। नायक की यह रिझ नायिका में खीझ उत्पन्न करती है। कारण यह कि उसके वे मनोभाव प्रकट हो चुके हैं जिन्हें वह गुप्त रखना चाहती है। फिर दोनों की आँखें मिलती हैं और आँखों के मिलने के साथ चेहरे खिल जाते हैं। आँखों का मिलना और चेहरे का खिलना प्रस्ताव की स्वीकृति का संकेतक है, लेकिन शीघ्र ही दोनों को अपनी सीमा का अहसास होता है और वे दोनों परिजनों की उपस्थिति के अहसास से लजा जाते हैं, कहीं उनके मनोभावों का पता परिजनों को न चल जाए।

यह पूरा-का-पूरा प्रेम व्यापार निःशब्द क्रिया-व्यापार का उदाहरण है, लेकिन इस दोहे में उस मौन के भीतर विद्यमान स्पंदन को सहज ही महसूस किया जा सकता है। बिहारी का यह दोहा 'देखन में छोटन लगे, घाव करे गंभीर' की कसौटी पर पूरी तरह से खरा उतरता है।

दोहा:- 34 लखि गुरुजन-बिच कमल सौं सीसु छुवायौ स्याम।
हरि-सनमुख करि आरसी हियैं लगाई बाम॥

व्याख्या:- प्रस्तुत दोहे में राधा और कृष्ण गुरुजनों से घिरे हुए हैं। राधा को देखकर कृष्ण में मिलन की इच्छा प्रबल होती है, लेकिन उनकी विवशता यह है कि वे शब्दों में अपनी इच्छा का इजहार नहीं

आग्रह है रूठी राधा के मान जाने का या फिर मिलन के आग्रह को स्वीकार करने का। राधा की ओर से विनम्रतापूर्वक प्रतिक्रिया आती है। राधा दर्पण को पहले कृष्ण की ओर करती है और फिर उसे अपनी हृदय से लगाती हुई उन्हें आश्वस्त करती है कि उसके हृदय में सिर्फ वही विद्यमान हैं, इस लिए रूठने का प्रश्न ही नहीं उठता।

जगन्नाथ दास रत्नाकर इसकी एक अन्य अर्थ की भी कल्पना करते हैं और वह यह कि राधा दर्पण को पहले सूर्य के सम्मुख करती है और फिर सूर्य के उस प्रतिबिम्ब को कुचरूपी पहाड़ी के बीच छुपाती हुई यह संकेत छोड़ जाती है कि सूर्यास्त के पश्चात् मुलाकात होगी।

यह अस्वाभाविक भी नहीं क्योंकि प्रेम में रूप के संदेश को मन तक पहुँचाने में नेत्र की अहम् भूमिका होती है। इसीलिए रसिक कवियों ने प्रेम में नेत्र-व्यापार की भूमिका का वर्णन विस्तार से किया है, चाहे वो विद्यापति हो या फिर सूर।

प्रस्तुतकर्ता
बेनाम कुमार
(अतिथि शिक्षक)
हिन्दी विभाग
राज नारायण महाविद्यालय हाजीपुर
(BRABU. MUZAFFARPUR)
मो०नं०- 8292271041
ईमेल - benamkumar213@gmail.com

दिनांक
28/07/2020